ज्योतिषविज्ञान एवं वर्षाऋतु एक चिन्तन

*डॉ. शालिनी सक्सेना

"अन्नं जगतः प्राणः प्रावृट्कालस्य चान्नमायत्तम्।

यस्मादतः परीक्ष्यः प्रावृट्कालः प्रयत्नेन।।"

सरांशः– वैदिक वाड्.मय एवं ज्योतिषशास्त्र में वर्षा के गर्भकाल, दोहदकाल और प्रसवकाल का वर्णन किया गया है। शीतकाल को गर्भ का, ऊष्णकाल को दोहद (गर्भपोषण) और वर्षाकाल को प्रसव का समय माना जाता है। किस महीने से शीतकाल और किस महीने से ऊष्णकाल और वर्षाकाल माना जाये, इस विषय में पर्याप्त मतभेद प्राप्त होते है। इन सब मतों का विश्लेषण कर वर्षाऋतु विषयक ज्योतिषीय चिन्तन को यहाँ प्रकट किया गया है।

विद्वानों के अनुसार मार्गशीर्ष से चार महीने फाल्गुन तक शीतलकाल, चैत्र से चार महीने आषाढ़ तक ऊष्णकाल और श्रावण से चार महीने कार्तिक तक वर्षाकाल होती है। इस समय में कार्तिक से माघ तक शीतकाल, फाल्गुन से ज्येष्ठ तक ऊष्णकाल और आषाढ़ से अश्विन तक वर्षाकाल माना जाता है। शीतकाल में गर्भधारण होता है, इसके बाद ऊष्णकाल में उसका परिपाक (पोषण) होता है और वर्षाकाल में वह प्रसूत होा जाता है अर्थात् बरस जाता है।

ज्येष्ठानक्षत्र के आस–पास जब अमावस्या हो तब गर्भकाल और ज्येष्ठा नक्षत्र के आसपास जब पूर्णिमा हो, तब प्रसवकाल अर्थात् वर्षाकाल समझना चाहिए। मार्गशीर्ष की अमावस्या को और ज्येष्ठ की पूणिमा को प्रायः ज्येष्ठा नक्षत्र आया करता है।

कई विद्वान् अलग ढ़ंग से गर्भ और प्रसवकाल का विभाग मानते है– मूलनक्षत्र के उत्तरार्द्ध में सूर्य के आने पर गर्भकाल और आर्द्रा नक्षत्र पर सूर्य आने से प्रसवकाल होता है अर्थात् मूलनक्षत्र पर जब सूर्य आवे तब से 06 दिन बाद में 04 मास तक गर्भकाल और आर्द्रा पर आवे तब से 04 मास तक प्रसव माने जाये।

मूल पर सूर्य पौषमास में, आर्द्रा पर आषाढ़ में प्रायः आया करता है और 13 दिन तक रहता है। कुछ विद्वान् कहते है कि जिस पात से सूर्य दक्षिणायन हो, वह गर्भकाल का प्रारम्भ और जिस पात में उत्तरायण हो, वह प्रसवकाल माना जाता है। गर्भकाल के प्रारम्भ का दिन मानने के विषय में मतान्तर है कि स्वातीनक्षत्र पर सूर्य के आने से या स्वाती के सूर्य में स्वातीनक्षत्र पर चन्द्रमा के होने से या स्वाती नक्षत्र के सूर्य पर अश्विनी के चन्द्रमा होने से अथवा अनुराधा के सूर्य में अनुराधा नक्षत्र पर चन्द्रमा के आने से या मूलनक्षत्र पर सूर्य के आने से गर्भकाल का प्रारम्भ होता है। इस पाँचों में मूलार्क से उत्तर के दृढ़फल वाले है और पहिले के मन्दफल है।

गर्भलक्षण के सम्बन्ध में बृहत्संहिता में विस्तार से विवेचन किया गया है। वराहमिहिर के अनुसार मार्गशीर्ष और पौषमास के शुक्लपक्ष में गर्भधारण होने पर मन्दफल अर्थात् स्वल्पवर्षा करने वाला होता है। इस गर्भलक्षण के प्रसंग में मास– चैत्रशुक्ल आदि ग्रहण करना चाहिए। जिस प्रकार चैत्रशुक्लपक्ष और वैशाखकृष्णपक्ष मिलकर चैत्रमास होता है, उसी प्रकार अन्य मासों की कल्पना करनी चाहिए। मोती या चाँदी के सदृश अतिशुक्ल अथवा तमालवृक्ष या

नीलकमल या अंजन के सदृश उत्यन्त कृष्णवर्ण अथवा जलचर प्राणियों के सदृश आभायुक्त गर्भकालीन मेष बहुत अधिक वृष्टि करने वाले होते है। प्रचण्ड सूर्य किरण से अभितापित और मन्दवायु से सम्पन्न गर्भकालीन मेघ गर्भधारण से 195वाँ दिन क्रोधी के समान होकर धाराप्रवाह बहुत अधिक वृष्टि करने वाला होता है।

सभी ऋतुओं में पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी आदि पाँच नक्षत्रों में संवृद्ध गर्भ अपने प्रसव के समय अतिवृष्टि करने वाला होता है। शतभिषा, अश्लेषा, आर्द्रा, स्वाती, मथा इन पाँच नक्षत्रों में गर्भधारण होने पर गर्भ शुभदायक होता है और अधिक दिन तक पुष्ट रहता है। पूर्वोक्त पाँच नक्षत्रों में स्थित गर्भ जब तक त्रिविध उत्पादों (दिव्य, आन्तरिक्ष, भौम) में आहत होता रहता है तब तक गर्भ पुष्ट ही होता है अर्थात् तब तक वृष्टि नही होती है। यदि पूर्वोक्त शतभिषा, अश्लेषा, आर्द्रा, स्वाती और मघा– इन पाँच नक्षत्रों में से जिस किसी भी नक्षत्र में मार्गशीर्ष मास में गर्भधारण होता है तो उस गर्भ का प्रसव समय से आठ दिन तक, पौषमास में गर्भ स्थित होन पर उसका प्रसष छः दिन तक, माघ में 16 दिन तक, फाल्गुन में 20 दिन तक, चैत्र में 20 दिन तक तथा वैशाख में 03 दिन तक वर्षा होती है।

पाँच निमित्तों वाला गर्भ एक द्रोण, वायु से सम्पन्न गर्भ तीन आढ़क, विद्युत् से युक्त गर्भ छः आढ़क, मेषों से सम्पन्न गर्भ नौ आढ़क और मेघ गर्जन से सम्पन्न गर्भ अपने प्रसव के समय से बारह आढक जल वर्षाता है। गर्भधारण समय के प्राप्मनक्षत्र पापग्रह से युक्त होने पर उपल, वज्र व मछली से सम्पन्न जल वर्षाता है। उस गर्भधारण कार्तिकनक्षत्र में स्थिति चन्द्र अथवा सूर्य शुभग्रह बुध, गुरू या शुक्र से युक्त अथवा दृष्ट हो तो अतिवृष्टिकारक गर्भ होता है। गर्भ समय अर्थात् गर्भधारणकाल में निमित्त का अभाव होने पर भी अधिक वृष्टि हेा, तो उस गर्भ की हानि होती है अर्थात् गर्भ जल प्रदान करने योग्य नही रह जाता है। जब पुष्टगर्भ 165वे दिन अपने प्रसव के समय ग्रहोपघात (दिव्य, आन्तरिक्ष, भौम) आदि उपद्रवों से दुष्प्रभावित होकर जलप्रद योग्य नही हो तो वह अपने आत्मीय गर्भ अर्थात् पुनः गर्भधारण करने समय उपल आदि मिश्रित वर्षा करता है। वायु, जल, विद्युत, गर्जन, मेघ आदि से सम्पन्न गर्भ के होने से अपने प्रसव के समय अत्यधिक वृष्टि करने वाला होता है, परन्तु ऐसे गर्भकाल में अधिक वर्षा के होने से उसके प्रसव बहुत वर्षा सम्भव नही होता है।

वृष्टि गर्भधारण – सोम के कारण चन्द्रमा शीत प्रवृत्ति का है, जिस नक्षत्रकाल में सूर्य किरणों द्वारा जल आकाश में जाता है, यदि उसी नक्षत्र पर चन्द्रमा भी स्थित हो तो वह जल उसी शीत प्रभाव वहाँ स्थिर हो जाता है, यही द्रगर्भधारणद्ध कहलाता है। यदि सूर्य–चन्द्रमा के मध्य अग्निन सम्बन्धी ग्रह महल अथवा वायु सम्बन्धी ग्रह शनि आदि आ नावे तो चन्द्रमा उस गर्भ को धारण नही कर सकता। यदि किसी कारण गर्भ रह भी जावे तो कुछ ही दिनों में पात भी हो जाता है।

मार्गशीर्ष से फाल्गुन तक शीतकाल, द्रगर्भकालद्ध, चैत्र से चार माह आषाढ़ तक ऊष्णकाल को द्रगर्भपोषणकालद्ध, श्रावण से चार माह कार्तिक तक वर्षाकाल को द्रगसबकालद्ध माना गया है।

सितादी मार्गशीर्षस्य प्रतिपद्दिवसे तथा।

पूर्वावाढ़गते चन्द्र गर्भाणां धारण भवेत्।।

गर्भधारण के समय योगायोग एवं फल का विवेचन करते हुए बराहमिहिर कहते है कि उपरोक्त ज्येष्ठमास के शुक्लपक्ष में स्वात्यगदि चार नक्षत्रों (स्वाती, विशाख, अनुराधा, ज्येष्ठ) नक्षत्रों में वृष्टि होने से क्रमशः श्रावण आदि चार मासो (श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक) में अवर्षण होता है अर्थात् ज्येष्ठशुक्ल के स्वाती नक्षत्र में वृष्टि होने पर श्रावण मास में, विशाख में वष्टि होने पर भाद्रपद मास में, अनुराधा में वृद्धि होने पर अश्विनमास में तथा ज्येष्ठानक्षत्र में वृष्टि होने पर कार्तिकमास में वर्षा का सर्वथा अभाव होता है। "माया–धुलि युक्त वृष्टि, जल, बालकृत

शुभदायी चेष्टायें, पक्षीगणों के सुन्दर कलरव, पक्षिगणों की धुलि या जलक्रीड़ा तथा मिमल और अविकृत परिवेष के साथ सूर्य व चन्द्र इस लक्ष्मणों से सम्पन्न गर्भ के धारण दिवस होने पर भी सभी प्रकार के धान्यों को उत्पन्न करने वाली सृष्टि होती है।"

गर्भदोहद (पोषण) काल :– ग्रीष्मऋतु में उत्तर, ईशान अथवा पूर्व की ओर से वायु बहे तो वह वायु कोमल और ह्रदय को प्रसन्नता देती हुई हो तो गर्भ पुष्ट होता है। मार्गशीर्ष और पौष मे सन्ध्याकाल में लालिमा होना, सूर्य–चन्द्रमा के कुण्डल रूप होना तथा मेघों का प्रकटा होना गर्भपुष्टि का लक्षण होता है। माघमास में विशेष वायु प्रवाहित होवे, पाला गिरने से ग्रह–तारों का प्रकाश कम हो, विशेष ठण्ड पडे एवं सूर्य के उदय–अस्त के समय बादल हो तो गर्भपुष्ट जानना चाहिए।

पौषे समार्गशीर्षेसन्ध्यारागोऽम्बुदाः सपरिवेषाः।

नात्यर्थ मृगशीर्षेशीतं पौषेऽतिहिमतापः।।

माधे प्रबलो वायुस्तुषार कलुषद्युती रविशंशाको।

अतिशीतं सघनस्य च भानोरस्तोदेयो धन्यै।।

फाल्गुनमासे रूक्षचण्डः पवनोऽभ्रसम्प्लवाः स्निग्धाः।

परिवेषाश्चासकलाः कपिलस्ताम्रो रविश्च शुभः।।

गर्भ के दोहद (पोषण) काल में अर्थात् ऊष्णकाल में उत्तर, ईशान और पूर्व की वायु चले और वह कोमल और ह्रदय को प्रसन्नता देती हुई हो तो इससे गर्भ पुषट होता है तथा सूर्य और चन्द्रमा के चौरवरफा सफेद, चिकना और बड़ा मण्डल हो तो वह गर्भ को पुष्ट करने वाला होता है।

पृथ्वी अपने स्थान पर (गिर्द) घूमती हुई पश्चिम से पूर्व की चलती रहती है और सूर्य के चारों ओर घूमती हुई ईशानकोण की तरफ झुकी हुई उत्तर को जाया करती है। पवन सामने दिशाओं से उत्तर, ईशान और पूर्व से आता हुआ प्रतीत होता है। यह इधर की हवा परमेष्ठि (आकाश में सोमपदार्थ का एक मण्डल) में ध्रुव तक का ठण्डक को लिए हुए होती है, इसलिए वह गर्भ को पुष्ट करती है।

बिजलियाँ, इन्द्रधनुष, धीमी गर्जना और सूर्य के बिम्ब के आगे छोटे–छोटे वृत्तमण्डल (कुण्डलना) के होने से तथा स्निग्ध फैले हुए बड़े–बड़े बादलों के होने से और कभी साफ चन्द्रमा वाले आकाश के दिखायी देने से भी गर्भ पुष्ट हुआ समझना चाहिए। रवि, भौम, बुध आदि ग्रहगण भी स्निग्ध गाति के हो, पुष्ट हो अर्थात् इनके तारों का प्रकाश खुब चमकीला एवं स्निग्ध हो और ग्रहण से युक्त न हो तथा सूर्य के दक्षिण की तरफ इनकी गति हो तो वह भी गर्भ के पुष्ट करने वाले होते है। इसी तरंह यदि पशु–पक्षीगण भी स्वभाव से ही बिना घबराये हुए की तरह सुन्दर आवाज करते हो और प्रमुख दिखाई दे, तो गर्भ पुष्ट हुआ समझना चाहिए। ये सभी लंक्षण सभी ऋतुओं के गर्भो की पुष्टि करने वाले कहे गये है। इसी प्रकार मासक्रम से भी बिशिष्ट लक्षण बताये गये है। यथा मार्गशीर्ष और पौष में सन्ध्या के समय ललाई का होना, सूर्य, चन्द्रमा के कुण्डलना होना और बादलों का होना गर्भपुष्टि का लक्षण है। मार्गशीर्ष में अधिक ठण्ड न पड़कर, पौष में अधिक ठण्ड पडे तो यह भी गर्भपुष्टि का अच्छा लक्षण हैं।

माघ में विशेष वायु चले, पाला गिरने से ग्रहों के तारों का प्रकाश कम हो, विशेष ठण्ड पड़े और सूर्य के उदयास्त समय बादल हो तो गर्भ पुष्ट हुए समझने चाहिए। फाल्गुनमास में रूखी और जोर की हवा चले, स्निग्धता को लिए हुए सफेद बादल दिखायी दे, सूर्य–चन्द्रमा के चौरतरफ अधूरे चक्र हो और सूर्य कपित्थ या ताम्रवर्ण का हो तो, वे

गर्भपुष्टि के लक्षण तथा फाल्गुन में वृक्षों के पत्तो को गिराता हुआ तेल पवन चले और चैत्र में दक्षिण दिशा की अत्यन्त मधुर वायु बड़े तो वह भी गर्भ की पुष्टि करता है। चैत्र में वायु चले, कुण्डलना हो, कुछ वर्षा तथा सफेद बादल हो तो गर्भ को पुष्ट हुआ समझना चाहिए। वैशाख में वायु, बिजली, वृष्टि, सफेद बादल और गर्जना होता गर्भपुष्टि का लक्षण है। ऊपर लिखे हुए प्रकारों से गर्भपुष्टि के लक्षण तो हो और गर्भ के नष्ट करने वाले उत्पात नही हो, तो वहाँ अच्छी वर्षा होती है और आनन्द प्रवृत्त होता है।

गर्भविनाश के लक्षण :–गर्भधारण के बाद कुछ लक्षण ऐसे दिखाई देते है, जिनसे गर्भ नष्ट हो जाता है। उन लक्षणों पर शास्त्रीय ग्रन्थों में विस्तार से विवेचन किया गया है। गर्भनाश करने वाले अनेक कारण है जो प्रकृति में दिखाई देते है, उनका अध्ययन करने से आगामी वर्षा का सटीक अनुमान किया जा सकता है। गर्भ के नाश करने वाले उत्पात तीन प्रकार के है। पार्थिव, आन्तरिक्ष्य और दिव्य। इन निम्नलिखित उत्पातों के होने से गर्भ का स्राव हो जाता है अथवा समय पर बरसता नही है वा कम बरसता है इत्यादि। वे उत्पात ये है – भूचाल का होना, कील गिरना, गन्धर्वपूर, धूमकेतु, ग्रहों का युद्ध, निर्धात, परिघ, धनुष का दीखना और सूर्य – चन्द्रमा का ग्रहण होना या गर्भमास के चिह्नों का बदल जाना।

भूचाल चार प्रकार के होते है– आग्नेय, ऐन्द्र, वारूण और वायव्य। पृथ्वी की अग्निन की गति से आग्नेयकम्प होता है, इस काम में कही से जमीन तोड़कर अग्निन की ज्वाला निकलती है। ग्रहों की चाल से ऐन्द्रकम्प होता है। जब पृथ्वी के एक तरफ शनि हो और दूसरी तरफ मंगल हो तो ये दोनों उस क्षण से सारी पृथ्वी को एकदम घुमा देते है। यही कम्प सबसे भयंकर और समस्त पृथ्वीभाग में होने वाला है। तीसरा कम्प वारूण है आर्थत् जल से होने वाला है, यह समुन्द्र के आसपास के देशों में विशेष होता है। चतुर्थ वायु की गति से वायव्य कम्प होता है। उल्कापात में रात्रि के समय आकाश में प्रकाश की लम्बी लाईन सी दीखती है, किन्तु वह प्रारम्भ से मोटी और पुच्छ भागों में पतली होती है। रजोवृष्टि में दिन के समय आकाश बिल्कुल धुंधला दिखायी देता है। दिग्दाह से सुबह–शाम दिशाओं में आग जलती हुई दिखाई देती है। वज्र दो तरह के होते है – वज्र और महावज्र। वज्र त्रिकोण और महावज्र षट्कोण होता है। कीलपात में पश्चिम से पूर्व तक एक लम्बी लोहे के समान रेखा आकाश में दिखने लगती है। गन्धर्वपुर से आकाश में बादलों के नगर, मकान आदि दिखते है। आकाश में धूमकेतु नाम नये तारे उगते है। इनमें कई तारों का झुण्ड होता है। रण में एक पुच्छलतारा भी होता है। निर्घात होने से बड़े जोर की आवाज आती है। परिघ होने से उदय और अस्त के समय सूर्यबिम्ब के तीन तरफ काली रेखा दीखने लगती है। धनुः– इन्द्रधनुष को कहते है। इस तरह से गर्भ के नष्ट करने के दुर्निमित्त कहे गये है। अब आगे जिन से गर्भ को पोषण होता है, वे निमित्त कहे जाते है।

गर्भ–प्रसवकाल :–गर्भधारण के बाद निश्चित अवधि बीतने पर गर्भप्रसव होता है। जब सूर्य दक्षिणगोल में रहता है तो उत्तरगोल में इनकी किरणें बहुत कम तेजी वाली होती है। दक्षिणगोल में तीव्र तपने से दक्षिण समुद्र का संतप्त जल चाष्पीकृत होकर अन्तरिक्ष में स्थित हो जाता है और यथासमय वायु द्वारा बरसाया जाता है।

सूर्य दक्षिणगोल में ही हो, किन्तु उत्तरायण हो चुका हो ऐसे समय में जिस नक्षत्र पर पहिये लिखे हुए वायु, बादल आदि पाँच प्रकार से गर्भस्थिति हेा जाये, तो उसी नक्षत्र पर चन्द्रमा के 8वीं बार आने पर वर्षा होती है। कई वैज्ञानिकों का मत है कि सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र इनमें से कोई भी वर्षा होने में कारण नही बजता है। केवल वायु से उठाया हुआ जल वायु द्वारा ही बरसाया जाता है। सूर्य के दक्षिणगोल में रहने के कारण तपे हुए समुद्र से जल उठता है और वह वायु द्वारा आकाश में फैलाया हुआ जल देश में बरसता है। जब सूर्य दक्षिणगोल में रहता है तो उत्तरगोल में इसकी किरणें बहुत कम तेज वाली होती है और दक्षिणगोल में विशेष तपती है। इसी कारण दक्षिणी समुद्र का तपा हुआ जल भाप बन करके आकाश में किरणों द्वारा उठा लिया जाता है और फिर वह वायु द्वारा समय

पर बरसाया जाता है।

वर्षा के प्रसवकाल की स्थितियों का निरूपण बृहत्संहिता में विस्तार से किया गया है। वर्षा कितने परिमाण में होगी, इस सम्बन्ध में बराहमिहिर ने कहा है कि ज्येष्ठमास की पूर्णिमा तिथि के व्यतीत होने पर पूर्वाषाढ़ा आदि सभी नक्षत्रों में वृष्टि का अभाव होने पर अशुभ कथन करना चाहिए। एक हाथ लम्बा–चौड़ा–गहरा विस्तार वाला वर्तुलाकार कुण्ड से वर्षा के जल का प्रमाण जानना चाहिए। इस जलपूर्ण कुण्ड का प्रमाण 50 पल यानि एक आढ़क तुल्य होता है। जिस वृष्टि से पृथ्वी की धूलि लुप्त हो जाये अथवा तृणों के अग्रभाग में जलकण दिखने लगे, उससे वर्षा का प्रमाण जानना चाहिए। इसका तात्पर्य है कि पूर्वाषाढ़ा आदि नक्षत्रों में से प्रथम बार जिस नक्षत्र से वृष्टि होती है, उस नक्षत्र से ही जल का प्रमाण कथन करना चाहिए।

काश्यपादि मुनियों के मत से प्रवर्षणकाल अर्थात् ज्येष्ठशुक्ल पूर्णिमा के बाद पूर्वाषाढ़ादि आदि नक्षत्र से सम्बन्धित समय में किसी प्रदेश विशेष में भी वर्षा के होने पर वर्षा के समय में फिर भी सुदर वृष्टि कहनी चाहिए। अन्य के मत में प्रवर्षणकाल में न्यूनतम दशयोजन पर्यन्त वर्षा हो तो वर्षाकाल में भी अच्छी वृष्टि होती है। गर्ग, वसिष्ठ और पराशर के अनुसार प्रवर्षणकाल में द्वादश योजन पर्यन्त वर्षा हो तो वर्षाकाल में भी अच्छी वृष्टि की कल्पना करनी चाहिए।

इस प्रकार प्रवर्षण के समय में पूर्वाषाढ़ा के सम में पूर्वाषाढ़ादि नक्षत्रों में से जिस भी नक्षत्र में वर्षा होती है तो प्रसव के समय भी उसी नक्षत्र में पुनः वर्षा होती है। हस्त, पूर्वाषाढ़ा, मृगशिरा, चित्रा, रेवती, धनिष्ठा आदि नक्षत्रों में से किसी भी नक्षत्र में प्रवर्षण के समय वृष्टि होती है। आर्द्रा में प्रवर्षणकाल में वर्षा होती है तो प्रसव के समय 18 द्रोण वर्षा होती है। यहाँ उपद्रवरहित नक्षत्र में ही उक्त द्रोण के समान वर्षा कहनी चाहिए। सूर्य, शनि, केतु, मंगल आदि के साथ तीन प्रकार के उपद्रवों (दिव्य, आन्तरिक्ष, भौम) से नक्षत्र के पीड़ित रहने पर अकल्याण और वर्षा का सर्वथा अभाव होता है।

भद्रबाहु संहिता में भी गर्भाधान से लेकर प्रसव तक के विभिन्न योगायोगों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। वर्षा के सही एवं सटीक अनुमान के लिए गर्भाधान, वर्षा आदि के महीनों का निश्चय करना चाहिए। तीन महीनो तक गर्भ की पक्वक्रिया होती है और तीन महीने वर्षा के होते है। कार्तिक, पौष, वैशाख, श्रावण, आश्विन मास में सौम्य अर्थात् शुभ गर्भ होता है और अधिक जल की वर्षा करता है अर्थात् उक्त मासों में यदि मेघ गर्भधारण करे तो अच्छी वर्षा होती है। यदि पुष्य, हस्त, अभिजित, अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भधारण हो तो शुभ है, इन नक्षत्रों के बाद शुभ नही। आर्द्रा, अश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रों में गर्भधारण कार्य हो तो उत्तम जल की वर्षा होती है। वैशाख मे गर्भधारण करने पर कार्तिक मास में जल की वर्षा होती है। इस प्रकार मेघ हिमागम के साथ जल की मन्दवृष्टि करने वाले होते है। स्वामी, अनुराधा, श्रावण और शतभिषा इन नक्षत्रो मे मेघ गर्भधारण करे तो अधिक जल की वर्षा होती है। पूर्व, उत्तर और ईशानकोण में जो मेघ गर्भधारण करते है, वे जल की वर्षा करते है तथा फसल भी उत्तम होती है। वायव्यकोण और पश्चिम दिशा में जो मेघ गर्भधारण करते है उनमें मध्यम जल की वर्षा होती है और अनाज की फसल भी उत्तम होती है। वायु से उत्पन्न गर्भ वायु के द्वार ही आन्दोलित किये जाते है तथा वायु चलता है। वर्षा करता है और गर्भ की क्षति भी होती है। इस प्रकार के गर्भ से बावड़ी, कुआँ, तालाब, नदियाँ आदि जल से लबालब भर जाते है तथ इस प्रकार जल कई बार बरसता है। उक्त प्रकार का मेघकर्म, मन्दवृष्टि, अनावृष्टि, राजा की पराजय का भय , दुर्भिक्ष, मरण, रोग इत्यादि का कारक है।

मार्गशीर्ष का गर्भ ज्येष्ठा या मूल में, पौष का गर्भ पूर्वाषाढ़ा में, माघ में उत्पन्न गर्भ श्रवण में, फाल्गुन मे उत्पन्न धनिष्ठा नक्षत्र में, चैत्र में उत्पन्न गर्भ अश्विनी नक्षत्र में जलवृष्टि करता है। पहले दिन मेघ गर्भों का निरूपण किया है, उनमें से उपर्युक्त मेघ गर्भ पहिले महिने में कम जल की वर्षा करता है। अवशेष प्रशस्त शुभ लक्षणों के अनुसार

अधिक जल की वर्षा करते है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वर्षाऋतु के सही अनुमान के लिए केवल वर्षाऋतु के प्राकृकि लक्षण ही नही अपितु सम्पूर्ण वर्ष के प्राकृतिक लक्षणों के आधार पर वर्षाकाल का अनुमान किया जाना चाहिए। विशेषकर गर्भकालीन मासों की स्थितियों से लेकर प्रसवकाल तक योगायोगों का सूक्ष्य विश्लेषण कर हमारे ऋषियों ने वैज्ञानिक ढंग से वर्षाऋतु स्थिति का सटीक पूर्वानुमान व्यक्त किया है। उनके द्वारा योगायोागों का अध्ययन कर आज के मौसम वैज्ञानिक वर्षा का सही अनुमान व्यक्त कर सकते है।

***प्रोफेसर**
राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय
मनोहरपुर (राज.)

सन्दर्भ सूची

1. बृहत्संहिता – 21.1
2. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, एकविंशोऽध्यायः, श्लोक 9–12
3. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, एकविंशोऽध्यायः, श्लोक 23–24
4. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, एकविंशोऽध्यायः, श्लोक 28
5. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, एकविंशोऽध्यायः, श्लोक 29–30
6. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, एकविंशोऽध्यायः, श्लोक 33, 34, 37
7. काश्यप संहिता
8. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, द्वाविंशोऽध्यायः, श्लोक 2
9. बृहत्संहिता 'माया' हिन्दी व्याख्या, ग्रहलक्षणविचारः, द्वाविंशोऽध्यायः, श्लोक 4–8
10. बृहत्संहिता, गर्भलक्षणाध्यायः, श्लोक 19–22